ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218 PP. NO.- 175-177

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-15, No.- II, Issues-24, YEAR- April-June-2022

सामाजिक परिवर्तनों से प्रभावित कला स्वरूपों का अध्ययन

1. मूल चन्द वर्मा
2. डॉ0 अलका तिवारी

1. असि0 प्रोफेसर चित्रकला विभागएम0एम0एच0 कालेज, गाजियाबाद, 2. एसो0 प्रोफेसर चित्रकाला विभाग, एन0 ए0 एस0 कालेज, मेरठ समन्वयक– ललित कला विभाग, चौ0 चरण सिंह विश्वविद्यालय, मेरठ (उ0प्र0) भारत

Received-19.06.2022, Revised-23.06.2022, Accepted-27.06.2022 E-mail: moolchandv565@gmail.com

सारांशः– *मानव एक सामाजिक प्राणी है। समाज के प्रत्येक कार्य एंव व्यवहार का मानव जीवन पर गहरा प्रभाव पड़ता है। मनुष्य अपने समाज की परम्पराओं, मान्यताओं, सामाजिक विचार धाराओं के साथ ही बड़ा होता है और समाज ही मानव जीवन का वह आधार भूत ढाचा है जो मानव को एक व्यवस्थित, सभ्य और सुसंस्कृति जीवन जीने के लिए प्रेरित करता है। मानव अपनी उत्पत्ति से लेकर आज तक अपनी बौद्धिक क्षमता के बल पर अपने को परिमार्जित व परिस्कृत करते आ रहा है। वृक्षों के नीचे, पहाड़ों की कन्द्राओं में रहने वाला आदिमानव आज अपने विवेक के बदौलत आधुनिक गॉव में बहुत तेजी से परिवर्तित हो रहा है। अतः यह स्वाभाविक है कि मनुष्य अपनी सोंच व बौद्धिक खोज के द्वारा समाज को प्रभावित व परिमार्जित करता रहता है। चूकि मानव एक संवेदनशील प्राणी है। अतः समाज में घटने वाली प्रत्येक घटानाऐं, मानव मन पर बहुत गहरा प्रभाव डालती हैं। यही कारण है कि समाज के परिवर्तन के साथ–साथ कला के स्वरूपों में भी हमे परिवर्तन देखने को मिलता रहा है जो समाज जितना खुशहाल एंव समृद्ध होगा वहां की कला भी उतनी ही उन्नत होगी और जो समाज जितना ही पिछड़ा एंव आपसी लड़ाई–झगड़ों में व्यस्त होगा वहां की कला उतनी ही निम्न होगी।*

कुंजीभूत शब्द– सामाजिक प्राणी, मानव जीवन, परम्पराओं, मान्यताओं, सामाजिक विचार, सुसंस्कृति जीवन,बदौलत।

आदिम समाज में मानव जब गुफाओं में वास करता था तो उसकी सामाजिकता के विकास के सर्वप्रथम प्रस्फुटन हमें उसके द्वारा निर्मित कला कृतियों से ही होता है। लिखुनियां में जंगली हाथी पर सवार जानवर का शिकार करना। आपस में एक दूसरे के साथ हाथों में हाथ डालकर नृत्य करती मानवाकृतियों के चित्र सम्भवतः भारतीय इतिहास के प्राथमिक साक्ष्य हैं, जो इस बात को सिद्ध करते हैं कि मानव 3000 ई. पू. ही एक दूसरे के साथ समूह में रहने लगा था और उसके सुख–दुख में भी सरीक होने लगा था। इस समय मानव द्वारा बनाये जाने वाले चित्रों में शिकारी पशुओं के चित्रों के साथ–साथ नाना प्रकार के विषय जैसे–पारिवारिक जीवन, नृत्यवादन, पूजा प्रतीक, वृक्ष पूजा, वनदेवता, स्वास्तिक पूजा, पात्र निर्माण, नौका संचयन, पशुपालन, कृषि कार्य आदि अन्य अनेक विषय भी जगह पाने लगे, क्योंकि मानव जीवन में इन चीजों के सरोकार भी समय के साथ जुड़ने लगे थे और विकासशील मानव के लिए यह कहॉ सम्भव था कि वह अपने विकास की इस गौरव गाथा को अपने चित्रों में न पिरोता।

हड़प्पा, मोहनजोदड़ो नामक नगरो की खुदाई से प्राप्त नाना प्रकार के कलात्मक साक्ष्यों से ही हमें पता चल पाता है कि हमारा समाज उस समय भी कैसे और किस दशा में रहा होगा। सिर्फ समाज कि दशा ही नहीं वरन् समाज की मान्यताऐं व परम्पराएं कैसी रही होगी इन सभी बातों का अनुमान भी हम तत्कालीन कलाकृतियों द्वारा ही लगा पाते हैं। शिकार व शिकारी जीवन का चित्रण करने वाला मानव अब तरह–तरह से दैनिक जीवन में प्रयोग होने वाले आभूषण भी बनाने लगा था। भव्य इमारतें, विशाल अन्नागार व सार्वजनिक इमारतों के निर्माण के साथ–साथ घोड़ा गाड़ी, बत्तख, बैल, कुकुद जैसे छोटे–छोटे खिलौनों की आकृतियां भी गढ़ने लगा था। मोहनजोदड़ो से प्राप्त कांस्य नर्तकी की प्रतिमा हो अथवा ध्यानस्थ योगी की प्रस्तर प्रतिमा या फिर हड़प्पा का नृत्यरत मानव धड़ ये सभी षिल्प यह सिद्ध करते हैं कि समाज में किस प्रकार के चलन व मान्यताएं व्याप्त थी। इन्हीं प्राप्त कलाकृतियों के विश्लेषण के आधार पर हम कह पाते हैं कि हमारा समाज मातृ सत्तात्मक था अथवा पितृसत्तात्मक।

जैसे–जैसे भारत देश में बाहरी लोंगों का आना शुरु हुआ वैसे–वैसे हमारे समाज में सत्ता की लड़ाई शुरु हो गई और शान्ति प्रिय समाज में रहने वाला मानव अब सत्ता व धन का भूखा हो गया। समाज की शान्ति व्यवस्था छिन्न–भिन्न हो गयी। सत्ता के लालच में समाज कई टुकड़ो में बंट गया। उस समय भी हमारे समाजिक नेताओं द्वारा शान्ति स्थापना हेतु विभिन्न प्रयास किये गये। अतः तत्कालीन चित्रों में हमें समाज द्वारा शान्ति स्थापना हेतु अपनाये गये विभन्न धार्मिक प्रयासों का पता चलता है। धार्मिक चित्रों के साथ–साथ युद्ध स्मारकों व धार्मिक चिन्हों, प्रतीकों को समाज को एक दिशा देने के लिए चित्रित किया जाने लगा। इसका स्पष्ट प्रमाण हमें सम्राट अशोक द्वारा निर्मित विभिन्न स्तम्भों और उनमें उकेरी गयी आकृतियों में आज भी देखने को मिलता है। बौद्ध धर्म अपनाने के पश्चात सम्राट अशोक ने बौद्ध धर्म के प्रचार–प्रसार के लिए बहुत प्रयास किए और कला इस कार्य मे उनके लिए सर्वाधिक प्रभावी माध्यम सिद्ध हुई। इसी कारण तत्कालीन समय में हमें बौद्ध धर्म के सर्वाधिक साक्ष्य प्राप्त होते हैं। आज भारत की महामुद्रा के रूप में प्रयोग किया जाने वाला चिन्ह आशोक कालीन श्रेष्ठतम् कला का

अनुरूपी लेखक/संयुक्त लेखक

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-15, No.- II, Issues-24, YEAR- April-June-2022

उदाहरण है। आजादी से पूर्व भारतीय समाज का स्वरूप सामान्यतया सामन्ती अथवा राजतन्त्रीय ही रहा और यह स्वाभाविक ही है कि कला राजसत्ता के अनुरूप अपना पाट बदलती रही होगी। राजसत्ता के अनुरूप समय–समय पर कला सौन्दर्य के प्रतिमान और विषय भी बदलते रहे हैं। कला में सामन्तीय अथवा राजसत्ता की रुचि–अरुचि का विशेष प्रभाव रहा, क्योंकि शासक की इच्छा के विरूद्ध किसी भी विषय का चित्रण सम्भव ही नहीं था।

पूर्व मध्य युग में समाज की अस्थिरता के कारण चित्रकला बहुत बड़े विस्तार को पाने में सम्भवतः असफल रही, क्योंकि एक स्थिर व सभ्य समाज में ही श्रेष्ठ कला का सृजन सम्भव है। समाज में आपसी युद्ध के साथ–साथ बाह्य अक्रान्ता भी राज व धन की लालसा में बराबर आक्रमण करते रहे। अब समाज में निर्मित होने वाली कला अपने श्रेष्ठ मार्ग से भटक गयी और पहले की अपेक्षा उसमें अवनति के लक्षण स्पष्ट दिखाई देने लगे। यही कारण है कि सम्पूर्ण पूर्व मध्यकाल की कला को स्वर्गीय राय कृष्ण दास ने अपभ्रंश शैली के नाम से सम्बोधित किया है। समाज की तरह ही कला भी अपने वास्तविक स्वरूप को खो चुकी थी। इस समय की कला समाज में शान्ति स्थापना के लिए समाज को एक दिशा दे रही थी। कला का काम धार्मिक प्रचार–प्रसार कर सामाजिक व धार्मिक समरसता स्थापित करना भी हो गया था और यह एक प्रमुख कारण माना जाता है कि धर्म में अधिक से अधिक लोगों को जोड़ने के लिए और धार्मिक बातों को अधिकाधिक सुगमता से लोगों में प्रचार–प्रसार के लिए कलाकृतियों के निर्माण में अधिक तीव्रता आयी होगी। यही कारण है कि जल्दबाजी में ज्यादा से ज्यादा प्रतियॉ बनाने के लिए कला का यन्त्रीकरण हुआ होगा और कला में ह्रास के चिन्ह आये होगें। मध्य युग की कला मुखयतः पाल, जैन, अपभंश, गुजरात आदि स्वरूपों में मिलती है और सभी कलाकृतियों में अवनति के स्पष्ट लक्षण दिखाई देते हैं।

उत्तर मध्य काल में सुदृढ़ शासन व्यवस्था के कारण समाज जहॉ–जहॉ लम्बे समय तक स्थिर रहा वहॉ हमें कला के एक निश्चित और विस्तृत स्वरूप के दर्शन होते है। राजतंत्रिय शासन व्यवस्था में प्रत्येक शासक की रुचि के अनुरूप हमें अलग–अलग कला स्वरूपों के दर्शन होते हैं। जहॉ अकबर के शासन काल में व्यक्ति चित्रों, पौराणिक व ऐतिहासिक ग्रन्थ चित्रों की प्रचुरता मिलती है, वहीं उसके पुत्र जहांगीर के शासनकाल के दौरान इनके साथ–साथ प्राकृतिक व शिकार चित्रों के भी दर्शन होते हैं। शान–शौकत प्रिय शाहजहॉ के शासन काल में चित्रकला की अपेक्षा स्थापत्य कला की ज्यादा उन्नति हुई। तत्कालीन समय में भारत का राजपूताना क्षेत्र कला के क्षेत्र में अपनी एक अलग गौरव गाथा समेटे हुए है। वहां समाज में वैष्णव धर्म की प्रधानता के कारण सम्पूर्ण क्षेत्र के चित्रों में कृष्ण भक्ति की एक लम्बी और सुदीर्घ धारा देखने को मिलती है। पहाड़ी राज्यों में भी हिन्दू राजपूत राजाओं की सुदृढ़ स्थिति के कारण वहां के चित्रों में भी हमे कृष्ण भक्ति की एक लम्बी धारा देखने को मिलती है, किन्तु समय और स्थान के अन्तराल के साथ हमें राजपूत राजस्थानी व राजपूत पहाड़ी राज्यों की कला मे रंगो व आकृतियों के शारीरिक बनावट मे स्पष्ट अन्तर देखने को मिलता है। पहाड़ी चित्रों मे हमे जहां आकृतियां अधिक कोमल व सुकुमार दिखती हैं। वहीं उनके रंग भी राजस्थानी चित्रों की अपेक्षा अधिक चमकीले व मधुर हैं।

भारतीय कला क्षेत्र मे कम्पनी अधिकारियों के आमद के साथ एक बड़ा परिवर्तन देखने को मिलता है। जैसे–जैसे कम्पनी अधिकारियों की दखल भारतीय समाज में बढ़ती जाती है। वैसे–वैसे हमे भारतीय चित्रों के विषय वस्तु और कुछ क्षेत्रों के रंगाकन पद्धति मे भी परिवर्तन देखने को मिलता है। पटना और उसके आस–पास के क्षेत्रों में 18वीं शदी के मध्य बने बहुत सारे चित्रों पर अंग्रेजी रूचि के स्पष्ट प्रभाव को देखा जा सकता है। मुगल दरबार से भागे इन परम्परागत चित्रकारों ने कला के क्षेत्र में पूर्णतः एक नई शैली को जन्म दिया जिस पर बाजारवाद का सर्वाधिक प्रभाव था। चूकी अंग्रेज भारत में व्यापार करने आये थे और वे ऐसी कलाकृतियों के निर्माण के पक्षधर थे जिनसे ज्यादा से ज्यादा धन कमाया जा सके।

भारतीय स्वतन्त्रता आन्दोलन की लहर जैसे–जैसे परवान चढ़ती गयी वैसे–वैसे हमारे चित्रकार भी इस आन्दोलन का हिस्सा बनते गये। बंगाल स्कूल के चित्रकारों ने अपने चित्रों के माध्यम से इस आन्दोलन को जन–आन्दोलन बनाने में अपनी महत्तवपूर्ण भूमिका अदा की। चित्रकारों ने यूरोपीय पद्धति की चित्रण परम्परा का विरोध कर चित्रों को पूर्णता स्वदेशी कलेवर में बनाया। अवनीन्द्र नाथ टैगोर द्वारा बनाया गया भारत माता का चित्र इसी स्वदेशी लहर का परिणाम था। इसी स्वदेशी प्रभाव के कारण ही अवनीन्द्र के शिष्य जैसे– नन्दलाल बसु, असित कुमार हल्दार, के. वेंकटप्पा, क्षितीन्द्र नाथ मजूमदार आदि ने भी अपने चित्रों में विषय के रूप मे भारतीय पौराणिक व ऐतिहासिक ग्रन्थो को अपनाया। पटना सचिवालय के सामने डी. पी. राय चौधरी द्वारा निर्मित शहीद स्मारक मूर्ति शिल्प अंग्रेजों द्वारा भारतीयों पर किये जा रहे वीभत्स अत्याचार को दिखाता है, कि किस प्रकार अंग्रेजों ने भारतीय सत्ता पर अपनी पकड़ बनाये रखने के लिए स्कूल में पढ़ने वाले बच्चों को भी दिनदहाड़े गोलियों से भूनकर मौत के घाट उतार दिया। स्वदेशी प्रभाव के कारण ही पश्चिम बंगाल मे जन्में यामिनी राय ने यूरोपीय पद्धति पर व्यक्ति चित्रण की अपनी परम्परागत विधा को छोड़कर आदिवासी समाज द्वारा अपनायी गयी सरल, सहज चित्र परम्परा की ओर मुड़ गये और आजीवन उसी मे लगे रहे। उनके द्वारा निर्मित चित्रों में आदिवासी व ग्रामीण समाज के सरल व सीधे सादे

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-15, No.- II, Issues-24, YEAR- April-June-2022

जीवन की झांकी स्पष्ट रूप से देखने को मिलती है।

स्वतन्त्रता के बाद भारत विभाजन और गोधरा काण्ड की त्रासिदी को समाज ने बहुत करीबी से झेला था। बहुत से परिवार उजड़ गये, बहुत से लोग बेघर हो गये, बहुत से लोगों का कत्लेआम किया गया। समाज से धर्म, नैतिकता, आदर्शवाद, समाजिकता ,प्रेम, भाईचारा जैसे शब्द मानो खत्म से हो गये थे। समाज की इस दशा ने मानव मन पर बहुत गहरा प्रभाव डाला। भारत के उत्तर पश्चिम के बहुत से चित्रकारों जैसे–सतीश गुजराल, तैयब मेहता, फ्रांसिस न्यूटन सूजा आदि के चित्रों में इस त्रासिदी को स्पष्ट देखा जा सकता है।

निष्कर्ष– रवीन्द्रनाथ टैगोर का कथन कि "कला में मनुष्य अपने आन्तरिक भावों को चित्रित करता है।" कला भावना का विषय है। चूंकी कला का मानव मन, उसकी सोंच, उसके विचारों से गहरा नाता है। इसलिए यह सम्भव नहीं है कि समाज मे रहते हुए कलाकार हृदय सामाजिक कृया कलापों से प्रभावित न हुआ हो। और एक कलाकार तो समाज का सबसे संवेदनशी प्राणी होता है। उसके लिए यह कैसे सम्भव है कि समाज की घटनाओं, उसकी चिन्ताओं, उसकी आकांक्षाओं को चित्रों मे न पिरोये। यही कारण है कि समाज के बदलाव के साथ समय–समय पर कला का स्वरूप भी बदलता रहा है। कभी कला मे हमे धार्मिक चित्रों की बहुलता मिलती है तो कभी राजकीय। कभी सामाजिक दुःख–सुख का चित्रण होता है तो कभी जीवन के नई आशाओं व नई कल्पनाओं का। इतिहास साक्षी है कि भारतीय संस्कृति और सभ्यता के विकास के समान्तर ही कला के विकास की प्रक्रिया चलती आयी है। समाज की बदली हुई परिस्थिति व परिवेश से प्रभावित कला ही नये कलेवर में सामने आयी है। युग चाहे जो भी रहा हो कला सदैव समाज से प्रभावित रही है। कलकारों ने समाज और उसके बदलते परिवेश व स्वरूपों का बहुधा चित्रण किया है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. गुप्त, डॉ जगदीश : "प्रागैतिहासिक भारतीय चित्रकला" नेशनल पब्लिशिंग दिल्ली।
2. कासलीवाल, डॉ. मीनाक्षीः "भारतीय मूर्तिशिल्प एंव स्थापत्य कला" राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर।
3. वैद्य, किशोरीलाल, हाडा, ओमचन्दः "पहाड़ी चित्रकला" नेशनल पब्लिशिंग हाउस दिल्ली।
4. अग्रवाल, डॉ. जी. के. :"आधुनिक भारतीय चित्रकला" संजय पब्लिकेशन्स, गढैया हकीमान, आगरा।
5. वाजपेयी, कृष्णदत्तः "भारतीय कला" मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल।

*****